

कल, आज और कल

बहुत कुछ खोकर भी जिंदगी सब कुछ दे देती है, ऐसा तो नहीं है। कुसुम ने अपनी उजड़ी दुनिया को तरतीब दी, बहुत कुछ छोड़ा, बहुत कुछ त्यागा, फिर भी नहीं जीत पाई, अपनों से... हार गई और हार उसने स्वीकार कर ली। मनु ने कुसुम को अकेला छोड़ दिया... उसने खुद से ही जंग लड़ी... अभी बीच जंग में ही था... अपने रास्ते के सही होने के भ्रम में वह सारे दूसरे रास्तों को बंद करता चल रहा था...। माही जो सब कुछ दूर से देख रही थी, कुसुम के होने से भी अनजान, अपरिचित... उसने मनु की जंग को ही झूठ कर दिया... उसे आधारहीन कर, उसके वजूद को हवा में उड़ा दिया। उसने कुसुम के चरित्र को भोगा और उसके होने को सच सिद्ध कर मनु के आधार को झूठ साबित कर दिया। इस जंग में जीता मनु भी नहीं...। माही जंग का हिस्सा नहीं थी, उसने तो बस तटस्थ होकर मनु को आईना दिखाया। इसे समय का बदलना ही कहेंगे, पुरुष समय के साथ नहीं बदला... स्त्री ने बदलना सीख लिया और इस दौर की स्त्री ने उस बदलाव को खुशी-खुशी ग्रहण भी किया।

कुसुम

आषाढ़ में ही बादल सावन से बौरा गए है। लगातार छ दिन से बरसे जा रहे हैं। कल रात को लगा कि बरस-बरस कर थक गए... आज सुबह से रुक-रुक कर बरस रहे है... दिन भर का काम निपटाते-निपटाते दोपहर हो आई...। मन न जाने क्यों भर-भर आता है। घर का सारा काम अपनी लय और गति से ही चल रहा है, फिर भी मन का बोझ नहीं हट रहा है। हाथ अभ्यस्त हो चले है काम के लिए लेकिन मन नहीं सधता तो नहीं ही सधता है...।

हफ्ते भर की बारिश के बाद आज जरा मौसम ने कुछ रहम किया तो लड़िकयाँ बुआ के घर चली गई। हफ्ते भर से बँधी-बँधी ऊब भी गई थी और फिर...। घड़ी में समय देखा तो डेढ़ बज चला था। देह का यंत्र धीमा पड़ा नहीं कि मन की उदासी गाढ़ी हो चली...। पिछले हफ्ते से यह तनाव बना हुआ है। मनु दो दिन बाद मुंबई जाने वाला है, न जाने क्यों उसने जिद पकड़ ली है कि अब वह मुंबई में ही पढ़ेगा।

अरे पिता का इतना बड़ा शो-रूम यहाँ है, उसे सँभाल... पढ़ने से कौन रोक रहा है, लेकिन अपनी जमी-जमाई पेढ़ी को कौन सँभालेगा? पूछो तो गुनगुन करने वाले अंदाज में कह देता है कि सपन भाई है तो...! कई साल सपन ने सँभाला, लेकिन अब तू भी तो सँभालने के काबिल हो गया है। कब तक दूसरे के सहारे चलेंगे। रुचि की सगाई का काम जिस तरह मनु ने सँभाला था, उससे कुसुम को लगने लगा था कि उसकी 18 साल की तपस्या सार्थक हो गई। पता नहीं अब अचानक क्या हुआ कि यहाँ से जाने की जिद ही पकड़ ली है। तीन बच्चों को 18 साल तक अकेले पालना कोई आसान काम नहीं है, यातना तो भोगी सो भोगी लांछन भी कम नहीं सहे। मन को भी मारा और देह

को भी... कई बार देह टीसी...। अपना सुख-दुख कहने के लिए तरस जाती थी। कुसुम को दुख है कि उसकी औलाद को ही उसके त्याग का... दुख-तपस्या का भान नहीं है।

रुचि की सगाई में ही उसने ताऊजी से इंदौर आने के लिए कहा था, लेकिन उन्होंने भी टाल दिया। वे भी क्या करें, बुढ़ापा है, बच्चों पर आश्रित हैं, सीधी-सी बात ही कही थी उन्होंने - चलो लेकिन यहाँ के सारे काम का क्या होगा...? फिर आज तो मैं हूँ कल भाइयों के सहारे जीना पड़ेगा। फिर नए शहर में जमने की अपनी दिक्कतें है।

मनु ने उसे नहीं बताया, भाई साहब ने ही पूछा था कुसुम से। कुछ प्रेम-व्रेम का चक्कर तो नहीं है मनु का। अरे होता तो क्या उसे नहीं बताता, चलो माँ से झिझकता तो बहनों को तो बता ही सकता था। नहीं ये प्रेम नहीं है, कुछ और ही है, अब कुछ और क्या होगा यह तो उसने किसी को भी नहीं बताया, न कुसुम को और न ही बहनों को। बस नए सत्र में उसने चुपचाप मुंबई विश्वविद्यालय में फॉर्म भरा और एडिमशन होने के बाद उसे जाने की जानकारी दी।

कितना आहत हुई वह...। कुल जमा सात साल की शादीशुदा जिंदगी थी कुसुम की... एक के बाद एक तीन बच्चों के पैदा होने और उसके बाद उन्हें बड़ा करने के चक्कर में अभी तो जिंदगी को जी भर कर देखा भी नहीं था, कि वह मनहूस दिन आ गया। कैंसर से मोहन जी की मौत हो गई। संपन्न परिवार में बहू बनकर गई साधारण परिवार की कुसुम की तकदीर सभी रिश्तों की बहनों के लिए ईर्ष्या का विषय थी। फिर पूरे परिवार में उस जैसी सुंदर लड़की नहीं थी, लंबा कद और छरहरा बदन, लंबे और खूबसूरत बाल... मोती जैसे दाँत और उस पर दूधिया गोरा रंग... सात सालों में मोहनजी भी नहीं भरे थे... उससे और... न जाने कैसे तो नशीले दिन जिए थे दोनों ने और अचानक सब कुछ खत्म हो गया था।

भाई तो उसे रख पाएँ ऐसे थे नहीं... सास-ससुर भी नहीं थे, ले-दे कर मोहनजी के एक बड़े भाई और दो बड़ी बहनें थी। बड़े भाई अपने परिवार के साथ इंदौर में रहते थे, घर जमाई हो गए थे। दोनों बहनें और मोहनजी उज्जैन में ही रहते थे, दोनों बहनों की शादियाँ हो गई थी और दोनों के कुसुम के हमउम्र बच्चे थे। राजन और सपन बड़ी जिज्जी के बेटे थे और दीपक, रोशन छोटी जिज्जी के बेटे थे। इनमें से सपन और रोशन दोनों में दो-दो साल का फर्क था, राजन कुसुम के बराबर था और सपन दो साल छोटा, दीपक एक साल और रोशन 3 साल छोटा था। तीन बच्चें और खूब धन-दौलत... फिर भी कुसुम अकेली थी। दोनों जिज्जियों के बच्चों के सहारे उसके अपने बच्चे बड़े होने लगे थे। सपन, दीपक और रोशन तीनों का घर आना-जाना लगा

रहता था, दीपक ने तो घर के छोटे-मोटे काम भी सँभाल लिए थे। वे घंटों कुसुम के घर में ही रहते थे।

मोहनजी के न रहने के बाद पहली बार माँ जब बिदा करा कर ले गई थी, तो एक दिन कच्चा मन खुल ही आया था दर्द से - 'अब मैं वहाँ नहीं जाना चाहती। माँ मुझे यहीं रहने दो।' दुख में तो कुसुम थी, इसलिए आगा-पीछा सब कुछ भूल गई थी, लेकिन माँ तो जीवन की धूप और छाँव को देखते ही पकी थी... सो दूर दृष्टि आ ही गई थी। माँ ने कहा - 'बेटा भाइयों के तो खुद ही ठिकाने नहीं है, वे तुझे और तेरे बच्चों को क्या रखेंगे... पिता के पास भी कुछ ज्यादा नहीं है, तुझे करने के लिए... फिर वहाँ इतना बड़ा कारोबार... जमीन, खेती, घर और किराएदार... कौन सँभालेगा। तेरे यहाँ आते ही रिश्तेदार सब हड़प जाएँगे। जो होना था हो चुका... बुरा हुआ, लेकिन अब इसी के साथ जीना और मरना है। रहा सवाल देखभाल का तो हमारा आना जाना तो लगा ही रहता है।'

न जाने भाभी किस काम से कमरे में आई तो बीच में दखल देते हुए बोली - 'अरे देखभाल का क्या है, तेरी ननद के जवान लड़के जो देखभाल करते हैं... कोई और क्या करेगा... मामी है तो क्या हुआ है तो जवान और खुबसूरत औरत ना... तुझे चिंता करने की जरूरत नहीं है, तुझे भी कोई कमी नहीं रहेगी और न तेरे बच्चों को... बिना जिम्मेदारी के मजा सभी को चाहिए... और जब रिश्ता ही ऐसा हो तो क्या...? फिर कोई किसी को भी क्या कहेगा, अय्याशी की अय्याशी होगी... तुम्हें सहानुभूति मिलेगी और उनको शाबाशी, तुम भी खुश वे भी खुश।' जिस अंदाज में भाभी ने अपना जहर उगला था... उससे कुसुम की आत्मा बिंध गई थी... माँ ने उसे समझाया, इसकी बात पर ज्यादा ध्यान मत दे तू तो जानती है कि वह जबान की जरा कड़वी है...।

अपने घर आ गई थी कुसुम और सूनी दुनिया को तरतीब देने का काम करने लगी थी... आखिरकार तीन बच्चों को न सिर्फ पालना था, बल्कि उन्हें पढ़ा लिखा कर संस्कारित भी तो करना था। उसकी जिम्मेदारी बहुत ज्यादा थी... इसका उसे भान था। तब से लेकर आज तक तरह-तरह के तानों, लाछनों और उलाहने सुने और चुप रहकर बच्चों को पाला। भाभी की बातें मन को कोंचती और खुद ही सवाल पूछती कि क्या जो कुछ भाभी ने कहा क्या यह सही है? फिर कई बार उसने अपने आप को बहुत चौकन्ना कर जासूस की तरह सूँघने की कोशिश की... शुरुआती दिनों में तो वह खुद से ही उलझती रहती... फिर मन के तर्कों से कौन जीता है? उसके मन को तारीफ करती नजरें, उसके सौंदर्य को नजरों से पीती जवान आँखें भाती थी, उसके मन में भी कुछ हरा और जवान हो जाता, जीवन का सूनापन जरा सिमट जाता... आखिर विधवा हो

गई तो... क्या? क्या वह स्त्री नहीं रही... क्या उसकी देह वासना नहीं जगाती है? क्या उसका सौंदर्य मलीन हो गया है? आखिर कितने सालों तक वह नजरों के ताप से ही पिघली और तृप्त(!) हुई है। पाप-पुण्य का प्रश्न कई सालों तक उसे मथता रहा... फिर... मन ने ही रास्ता ढूँढ़ निकाला था... पाप और पुण्य तो सामाजिक है ना, किसने हमें समझाया कि पाप क्या है और पुण्य क्या है? बच्चे को क्या पता पाप और पुण्य क्या है? जंगल में पाप-पुण्य नहीं होता? क्या देह का कोई धर्म नहीं है? देह की इच्छा को तो दबा भी दें, लेकिन मन का क्या...? फिर उसने तो कभी भी अपनी जिम्मेदारी से मुँह नहीं मोड़ा। सालों-साल बच्चों को पूरी इमानदारी से पालती रही अच्छी माँ बन कर... इतने साल इस आस में निकाल दिए कि बच्चों के बड़े और समझदार होते ही उसकी जिम्मेदारी पूरी हो जाएगी। समय गुजरता रहा... जीवन आगे बढ़ता ही रहा...। रुचि का रिश्ता पक्का हुआ उस दिन कुसुम को लगा, जीवन का एक पड़ाव पार हुआ...।

मन में ठहराव आने लगा था... पता नहीं कहाँ क्या गड़बड़ा गया कि अचानक मनु ने शहर छोड़कर जाने की जिद पकड़ ली। न उससे कुछ पूछा गया और न ही कभी मनु ने ही उसके सामने अपना मन खोला।

मनु

कई रातों से मनु को नींद नहीं आ रही है। कल रात भी बहुत देर तक जागता रहा। माँ के कमरे की बिजली भी बड़ी देर तक जलती रही... उसे भी माँ की तकलीफ समझ में आती है, लेकिन वह क्या करे, जो कुछ उसने सुना है, उसके बाद उसकी बुद्धि काम ही नहीं कर रही है। देर रात तक न नींद थी और न ही चैन... कहाँ जाए क्या करें बार-बार यही सवाल उसके सामने खड़ा है। पता नहीं कब उसका मन कमजोर हो गया और नींद ने उसे आ घेरा।

सुबह हुई तो कमरे से बाहर जाने का मन नहीं हुआ। बहुत देर तक घर के पीछे वाले हिस्से में खुलती गैलरी में बैठा रहा। चिपचिपा और तरल तनाव घर के हर कोने में फैलता दिखने लगा। कभी उसे लगता कि माँ ही क्यों नहीं पहल करती...? फिर सोचता माँ ने यदि पहल की तो वह क्या कहेगा...? बस... यही तो समस्या है, रुचि दी ने भी उससे कुछ नहीं पूछा...। यदि दी पूछेगी तो भी वह कुछ कह पाएगा क्या... आखिर मामला माँ से जुड़ा हुआ है। कमरे से बाहर निकलने का मन नहीं करता है और कमरे में भी घुटन होती है। कैपस की तरफ निकल जाए तो वहाँ भी क्या करेगा। अभी तो सेशन शुरू नहीं हुआ तो कोई वहाँ मिलेगी भी नहीं।

बहुत सोचा कि वह क्या करे, लेकिन कुछ रास्ता सूझता ही नहीं। माँ से भी कहे तो क्या कहे? कई बार उसका भी चीख कर रोने का मन करता है, वह किससे कहे, छोटा सा शहर है, पता नहीं कौन किसे जानता हो और बात फैलते-फैलते क्या रूप ले ले, उसके परिवार की समाज में इज्जत है। कई बार उसने सोचा कि माँ से बात करे, लेकिन शब्द कहीं अटक-अटक जाते हैं। कई-कई दिनों तक उसने बातों को सिलसिलेवार जमाने और माँ से कहने की योजना बनाई, लेकिन कभी शब्द नहीं मिलते तो कभी भाव नहीं... आखिर समझ नहीं आता कि माँ से क्या कहे, कैसे कहे? उसे समझ में नहीं आता वह क्या करे? कहाँ जाए... खुद ही लाँघ जाए इस नर्क को, नजर से दूर, दिल से दूर...।

आखिर आज रुचि दी ने उससे पूछ ही लिया... उनकी आँखों में आँसू थे, गला रुँधा हुआ, क्या मुझसे कोई गलती हो गई...?

उमड़ पड़ा था मनु... खुद भी रोने लगा था... नहीं दी...।

फिर क्यों अचानक हम सबको ऐसे छोड़कर जा रहा है, आखिर तेरा मन कैसे हो गया, हमें ऐसे छोड़कर जाने का...! हाँ... क्या बात है, हमें बताएगा तो ही तो हम समझ पाएँगे।

वह दी को बताना चाहता है, लेकिन क्या कहेगा...? बहुत सोचने के बाद उसने रुचि दी को बताया।

आपकी सगाई के थोड़े दिन पहले की ही घटना है दी। सगाई के काम काज मे लगा हुआ था मैं। दो दिन बाद ही सगाई होनी है और बहुत काम बाकी था। अपने कमरे से मैं किसी काम के सिलसिले में बाहर निकल रहा था कि सीढ़ियों के नीचे से करुणा भाभी की तेज आवाज सुनकर वहीं रुक गया। वे जोर-जोर से बोल रही थी। उनकी आवाज थर्रा रही थी और वे कह रही थीं - 'मुझे नहीं मालूम क्या, यहाँ क्या होता है। ये औरत नहीं समझती क्या कि तुम सारे के सारे जवान भतीजे क्यों यहाँ आते हो और क्यों मामी के आगे-पीछे घूमते हो...? बहुत साल सह लिया... अब तो समझ जाओ, तुम्हारी अपनी बेटी मुझसे सवाल पूछती है कि पापा मामी के घर ही क्यों जाते हैं? बुआ के घर तो जाते नहीं देखा... अब वो भी बड़ी हो रही है और भगवान ने उसे बुद्धि भी तुमसे ज्यादा दे दी है। आज उसने डिबेट में जिले में पहला स्थान पाया है, और तुम उसके साथ होने की बजाय अपनी मामी को सहलाने के लिए यहाँ आए हो... शर्म नहीं आती।'

दीपक भाई बार-बार कह रहे हैं चुप हो जा... धीरे बोल लेकिन भाभी ने तो जैसे बरसों का गुबार निकाल लेने की ठान ली हो। बहुत साल रंगरेलियाँ मना ली, अब उस छिनाल के बच्चे भी जवान हो गए है... तुम्हारे बच्चे भी बड़े हो गए हैं, तुम दोनों की अगन नहीं बुझी अभी भी... उसे क्या है, उसे तो किसी न किसी मर्द का सहारा चाहिए, फिर तुम सब मिले तो हो जो उसकी सब तरह की जरूरतों को पूरा करने के लिए, उसे तो उसके एवज में कुछ करना नहीं पड़ता, जरा-सा पल्लू ही गिरा दे तो तुम सब तो निहाल हो ही जाओगे। भाभी जहर पर जहर उगल रही थी और मेरी आँखों के आगे काला स्याह अँधेरा छाने लगा था।

मन् बोलता जा रहा था और रुचि स्नती जा रही थी, वह कह रहा था कि मैंने कभी सोचा ही नहीं कि रिश्तों के पीछे काँ सच इतना भ्रष्ट है... बस तभी से मैं असमंजस में रहा और अंतत मैंने यहाँ से जाने का विचार कर लिया। अब आक्रोश मन् की आँखों में उतर आया - 'दी मैंने माँ से यहाँ से जाने के बारे में कहा तो उन्होंने इसे सिरे से खारिज कर दिया... अब बताओ मैं क्या समझूँ...?' रुचि के कान लाल होकर तपने लगे थे, बदन में झ्रझरी सी होने लगी थी... उसे जवाब नहीं सूझ रहा था...। वह माँ को भी गलत नहीं मान पा रही थी और भाई के त्रास को भी समझ रही थी... ऐसे में वह मन् से यह भी नहीं कह पा रही थी कि यहाँ से मत जा और ये भी नहीं कह पा रही थी वो माँ से बात करेगी। माँ से बात करेगी भी तो क्या? हाँ ये सही है कि अब किसी भी भाई का यहाँ आना उसे स्हाएगा नहीं और माँ का उनकी सेवा टहल करना तो और भी नहीं... लेकिन एक औरत होने के नाते वह यह भी समझ रही थी कि इतने साल सुख-दुख में जिन लोगों ने माँ का साथ निभाया, उनसे एकदम से कन्नी भी नहीं काटी जा सकती है, और फिर किसके भरोसे, जिस भाई का भरोसा था, वह तो खुद ही प्लायन कर रहा है। भरे मन से रुचि वहाँ से उठ कर चली गई, और मनु के जाने तक माँ से कतराती रही...। माँ ने भी भरे मन से मन् के जाने को स्वीकार कर लिया। आखिर कर ही क्या सकती है वह?

हमेशा से हारती ही आई है, नसीब से तो कभी अपने बच्चों से... हार कर दुख नहीं होता ऐसा तो नहीं है, लेकिन अब सहना सीख लिया है, या यूँ कहे कि जीवन ने सहना सिखा दिया है।

माही

अब मनु ने भी स्वयं को लहरों के हवाले कर दिया था। सोच और भावनाओं से शून्य होकर वह जाने के दिन का इंतजार करने लगा था। आखिर वह दिन भी आ ही गया। आँखें चुराते हुए उसने माँ के पैर छुए थे, लेकिन माँ की सिसकी रुदन में बदलते ही वह माँ के गले लग कर सिसक पड़ा था। मन थोड़ा कच्चा हुआ, लेकिन वक्त ने सब कुछ तय कर दिया था... उसके लिए पीछे जाने के रास्ते बंद हो चुके थे, अब तो आगे जाने के अतिरिक्त उसके सामने और कोई रास्ता नहीं बचा था, फिर यूँ भी नहीं कि उसका मन स्थिर हो चला हो... वह तो बस क्षणिक आवेग था, भावना से ऊब-डूब करते हुए आखिर वह रवाना हो ही गया।

नागदा निकलते तक तो अतीत पीछे छूट गया और भविष्य आँखों के आगे झिलमिलाने लगा। मनु ने आँखें बंद कर भविष्य से भी पीछा छुड़ाने की कोशिश की, लेकिन जैसे-जैसे ट्रेन ऑगे की ओर बढ़ रही थीं, वैसे ही मन भीँ आगे ही दौड़ रहा था। कई दिन लगे उसे होस्टल, खाने की व्यवस्था करने, क्लास, किताबें और नए लोगों, नए परिवेश से सामंजस्य बैठाने में...। धीरे-धीरे मन ठहरने लगा...। तभी क्लास में आई नई लड़की माही से उसका परिचय हुआ। गेहुँआ रंग, आर्यों सी बनावट और स्वभाव वाली माही के चेहरे पर मनु ने हमेशा ही तल्ख भाव पाए, आँखों से लगता कि अंगारे झरते रहते हैं, लड़कों को तो वह कुछ समझती ही नहीं है और बहुत दिलेर...। मन् की उदासी और उदासीनता की वजह से माही उससे न तो उलझती और न ही कतराती थी, फिर एक प्रोजेक्ट में दोनों ने साथ में ही काम किया तो जो थोड़ी-बह्त असहजता थी, वह भी दूर हो गई... लेकिन माही खुद को लेकर मनु को कोई गलतफहमी नहीं होने दी थी। उसके व्यक्तित्व में एक अजीब तरह का रहस्य था, वह कभी भी अपने ख्लने का आभास नहीं देती थी... एक बार यूँ किसी क्षण में उसने यह जरूर बता दिया था, कि वह अपने घर में नहीं रहती और होस्टल में रहती है। खर्च चलाने के लिए कोचिंग में पढ़ाती है। जैसे-तैसे काम चल जाता है...। परिवार उसका मंबई में ही है, लेकिन उसका उनसे कोई रिश्ता नहीं है... कारण कभी नहीं बताया...।

मनु को कभी-कभी घर की बहुत याद आती... माँ का चेहरा रुचि दी और राखी... लेकिन अब वह वहाँ से बहुत दूर है और कड़वाहट भी कम हो चली थी, फिर भी वहाँ लौटना और उस माहौल में उन्हीं लोगों के बीच रहने की कल्पना भी उसे बेचैन कर देती थी। पहले सेमेस्टर के बाद प्रोजेक्ट करने का दौर फिर शुरू हो गया था...।

घाटगे सर ने उससे बिना पूछे ही मध्यप्रदेश के लिए आए एक प्रोजेक्ट में उसका नाम लिख दिया। मनु चिढ़ गया... और जैसे ही घाटगे जी क्लास में आए, मनु ने उनसे पूछ लिया कि 'इस प्रोजेक्ट में मेरा नाम क्यों दिया गया?' उन्होंने भी सहज रूप से कह दिया, 'तुम उस तरफ के हो और वहाँ अच्छे से काम कर पाओगे साथ ही अपने घर भी रह लोगे..।' मनु ने दो दिन सोचने की मोहलत ले ली, लेकिन वह मन में ही तय कर चुका था कि वह लौट कर नहीं जाएगा।

कल रविवार है और आज मनु बहुत उदास है... होस्टल के सभी लड़कों ने फिल्म देखने का कार्यक्रम बनाया है, लेकिन मनु ने तबीयत खराब होने के बहाना बना दिया और अपने कमरे में जाकर सो गया। जब सारे लड़के निकल गए तो उसकी बेचैनी बढ़ गई...। बहुत देर तक कमरे में ही पड़ा रहा, लेकिन फिर वह भी होस्टल से बाहर चला गया। घूमते-घूमते वह जुहू बीच पहुँच गया।

जब वह पहुँचा तो सूरज ढ़लने की तैयारी में था...बीच पर खासी रौनक थी... लोग आज से ही सन-डे मनाने लगे थे, इन सबके बीच मनु खुद को ही अजनबी लग रहा था। बीच की रेत गुनगुनी हो गई थी... समुद्र सभी को देखकर मस्त हो चला था और यूँ लग रहा था कि लहरें उछल-उछल वहाँ इकट्ठा लोगों का मनोरंजन कर रही थी, डॉल्फिन की तरह...। एक सुनसान कोने को मनु ने अपना साथी बनाया और फिर पहुँच गया, उसी उदास दुनिया में जहाँ से निकलने के लिए वह इस विराट शहर में आया था। अचानक माही अपनी एक दोस्त के साथ उसके सामने आकर खड़ी हो गई।

मनु की आँखों ने चुगली की... तो माही असमंजस में वहीं खड़ी हो गई। उसकी दोस्त ने उससे कुछ कहा और वह चली गई।

पता नहीं यहाँ की लड़कियों को इतनी समझ कहाँ से आ जाती है... इस परेशानी में भी इस तरह का विचार आते ही वह हल्का होकर तैरने लगा था। लेकिन कहीं कुछ अंदर तड़क भी गया था महज एक धक्का उसे ढहाने के लिए काफी लग रहा था। माही उसके पास आकर बैठ गई। नजरें उसकी डूबते सूरज की तरफ थी... बहुत देर तक दोनों चुप रहे, फिर माही ने भी पहल की... यहाँ अकेले क्यों बैठे हो?

कुछ भरभरा कर ढहा... लेकिन बाहर नहीं निकला। गला भर गया और आँखों में उदासी उतर आई, बड़ी मुश्किल से आवाज निकली - बस यूँ ही थोड़ा उदास हूँ...।

क्यों...?

ना जाने कैसे उसने अपना जख्म माही के सामने खोल दिया... सब कुछ एकदम अनायास... जो कुछ वह अपनी माँ से नहीं कह पाया, वह उसने एक ऐसी लड़की से कह दिया, जिससे उसका कोई संबंध नहीं है। माही उसे बह्त ध्यान से सुन रही थी। बात खत्म हो गई, दोनों चुप... मनु रिसकर खाली हो गया... एक अजीब-सी अनुभूति... और माही, पता नहीं कहाँ थी, दोनों के बीच एक शून्य पसर गया। सूरज समुद्र में डूब गया... दिन पर स्याह अँधेरा उतरा और साँवलापन बीच पर फैलने लगा... और मन पर भी...। मनु तो रीत गया, लेकिन माही के भीतर बहुत कुछ घटा... अचानक वो फट पड़ी।

तुम... तुमने कभी उसे माँ से अलग कर एक औरत एक इनसान की तरह देखने की कोशिश की? कभी तुमने ये जानने की कोशिश की कि उसने तुम तीन भाई-बहनों को कैसे बड़ा किया...? तुम कभी भी ये समझ पाए कि उसने इस सबमें क्या खोया, क्या छोड़ा और खुद को कितना मारा होगा? तुमने कभी सोचा कि वो भी अच्छी खासी जिंदगी जी सकती थी, यदि उसने दूसरी शादी कर ली होती तो भी तुम उसे माफ करते? अब जबिक उसने अपनी पूरी जिंदगी तुम्हारी माँ और तुम्हारे बाप की विडो होकर निकाल दी, तो तुम ये सोचने लगे कि उसका चिरत्र क्या होगा। यू आर एक्सट्रीमली सेल्फ-सेंटर्ड, इरिस्पांसिबल एंड इनसेंसिंटिव मेन... एंड ऑफकोर्स होपलेस टू...। तुमने उनसे बहुत सारी उम्मीदें की, उसने भी तुम्हारी जिंदगियों पर अपनी जिंदगी वेस्ट कर दी... तुमने उसे क्या दिया?

माही बिना रुके लगातार बोल रही थी। उसकी आँखों के अंगारे लाल होकर झरने लगे थे...। कभी सोचा कि उसकी क्या-क्या और कैसी-कैसी जरूरतें होगी, और ये भी कि वह कैसे उस सबसे उबरी होगी। एक औरत के कुछ भी बोल देने से तुम अपनी माँ को छोड़कर आ गए, यू आर कावर्ड एस्केपिस्ट... शेम ऑन यू...। यदि उनका सही में भी किसी से अफेयर होता तब भी तुम्हें उन्हें समझने की कोशिश करनी चाहिए थी। आखिर वो तुम्हारी माँ के साथ-साथ एक इनसान और एक औरत भी है, मात्र इसलिए कि वो तुम्हारी माँ है, तुम उससे उसका औरत होना कैसे छीन सकते हो? और वो भी अपना इनसान होना कैसे रोक सकती है?

मनु अवाक होकर उसके बोलने को देखता रहा... पत्थर से शब्द से टकरा रहे थे। माही झटके से उठी और चली गई। मनु उसे जाते हुए देख रहा था। ज्वार उतर गया था, गंदगी किनारे पर पसरी थी...। मनु न सिर्फ रिक्त हुआ बल्कि झूठ हो गया... एक बेकार का झूठ...।

